आलोचनाएं गवाह हैं कि भारत जोड़ो यात्रा लोगों के दिमाग में दाखिल हो चुकी है

भारत जोड़ो यात्रा ने मोदी के सबसे तेज हथियार को कुंद कर दिया है. अब कांग्रेस को चाहिए कि वो अपने संदेश को वेधक बनाये और संदेश की पहुंच का विस्तार करे.

योगेन्द्र यादव

आखिर भारत जोड़ो यात्रा दिल्ली पहुंच ही गई. संयोग देखिए कि यात्रा का देश की राजधानी में पहुंचना और देश के मानस में पैठ बनाना एक साथ हुआ है. और, जो ऐसा हुआ है तो शुक्रिया कहना बनता है मुख्यधारा की मीडिया के उस बड़े हिस्से का जिसने बड़ी देर और ना-नुकुर के बाद अब मान लिया है कि दिलों को जोड़ने के लिए देश में एक यात्रा हो रही है और अब यह यात्रा दिल्ली आन पहुंची है. एक बात और भी हुई हैः नरेन्द्र मोदी सरकार ने यात्रा को रोकने के लिए कोविड के खतरे की हवा बनाने में जिस छल-कपट से काम लिया है उसकी वजह से भारत जोड़ो यात्रा ने देश के राजनीतिक परिदृश्य पर भी अपनी धमक दर्ज कर दी है.

कोई एकदम सामने आ खड़ा हो और आंखों में आंखे डालकर बात करने लगे तो क्या होता है? दरअसल हम उसकी जांच-परख करने लगते हैं, मीन-मेख निकालने में जुट जाते हैं. इसे यात्रा की कामयाबियों में ही गिना जायेगा कि भारत के सर्वाधिक कल्पनाशील और अग्रणी चिन्तकों ने इसके बारे में आलोचनात्मक टिप्पणी की है. अभी तक यात्रा को लेकर लाइव स्ट्रिमिंग्स हुई थी, आधिकारिक कथानक बने थे. जो इस यात्रा में सहयात्री बने उनमें से कुछ ने अपनी यात्रा का वृतांत लिखा, यात्रा को लेकर कुछ जमीनी रिपोर्ट भी छापी और जब-तब यात्रा के निहितार्थों और फलितार्थों के बारे में कुछ चिन्तनपरक लेख प्रकाशित हुए.

लेकिन, हाल-फिलहाल के कुछ आर्टिकल्स को लेकर बहस एक अलग ही मुकाम पर पहुंच गई है. यात्रा की बात अब राहुल गांधी की टी-शर्ट, यात्रियों के रैनबसेरों और गंतव्य को जाने वाली सड़क के नक्शे तक सीमित नहीं रही. बहस अब बिल्कुल मुद्दे की बात तक

आ पहुंची है कि, यात्रा का देश की राजनीति पर क्या असर पड़ेगा, क्या इस यात्रा के भीतर इतनी ताकत है कि वह हमारे गणतंत्र को तहस-नहस करने पर तुली प्रभुत्वशाली सत्ता के विरुद्ध कोई राजनीतिक और विचारधाराई विकल्प गढ़ सके. हमारे समय की केंद्रीय प्रश्न है कि हम अपने गणतंत्र को कैसे बचायें और कैसे उस पर फिर से अपना दावा जतायें और भारत जोड़ो यात्रा का मूल्यांकन इस चुनौती के बरक्स किया जायेगा.

आलोचनाएं यात्रा के लिए प्रकाश स्तंभ की तरह

आइए, जरा अपना ध्यान द इंडियन एक्सप्रेस में छपे प्रोफेसर सुहास पळशीकर और प्रताप भानु मेहता के हाल के लेख पर केंद्रित करें. वजह सिर्फ ये ही नहीं कि इन दोनों का नाम देश के अग्रणी राजनीतिक टिप्पणीकारों में शामिल है बल्कि इसलिए भी कि दोनों ने यात्रा के महत्त्व, उद्देश्य के प्रति पूरी हमदर्दी रखते हुए यात्रा की पहली गंभीर आलोचना प्रस्तुत की है. प्रोफेसर पळशीकर के लेख से आलोचना का संदर्भ उजागर होता है कि 'आज की मुख्य चुनौती राष्ट्र-निर्माण के संविधान-वर्णित राह पर पूरे दमखम के साथ चलने, भारतीय 'आत्म' की पुनर्कल्पना करने और लोकतंत्र के रग-रेशों को नये सिरे से गढ़ने की है.' यह कहना उचित होगा कि यात्रा की कामयाबी इस भारी-भरकम चुनौती के विपरीत ही मापी जायेगी.

यात्रा से अबतक जो हासिल रहा है, उससे दोनों (लेखकों) में से कोई भी संतुष्ट नहीं. प्रतापभानु मेहता ने यों तो यह स्वीकार किया है कि यह यात्रा 'एक नये सियासी वितान को तानने का अभिनव प्रयास' और 'नफरत की राजनीति को धता बताने की एक अहम भंगिमा' है लेकिन उन्हें यह भी लगता है कि यात्रा अभी उस मुकाम तक नहीं पहुंची कि उसे 'उम्मीद की रोशनी जगाती राजनीति' का नाम दिया जाये. पळशीकर ने यात्रा की आलोचना में लिखा है कि 'पार्टी को पुनरूज्जीवित करने' और 'राष्ट्र की लोकतांत्रिक आत्म-चेतना' को जगाने के अपने दोनों ही मुख्य उद्देश्यों को पूरा करने में यह यात्रा उतनी कामयाब नहीं हुई है जितनी की उम्मीद थी.

यात्रा के साथी शायद इस मूल्यांकन से सहमत ना हों और शायद प्रतिवाद करने की सोच लें. कोई चाहे तो यह भी कह सकता है कि जिन स्थितियों में यात्रा का आरंभ हुआ उसे आलोचक ठीक-ठीक नहीं समझ पाये हैं या फिर यह भी कहा जा सकता है कि संभावनाओं का जितना बड़ा आकाश आलोचकों ने यात्रा के साथ नत्थी किया है, उतना इस यात्रा को कभी उपलब्ध ही नहीं रहा. यह भी कहा जा सकता है कि यात्रा का असर आगे के दिनों में दिखायी देगा, जब यात्रा समाप्त हो जायेगी. प्रतापभानु मेहता ने इस बात को अपने लेख में स्वीकार किया है. लेकिन इस किस्म के प्रतितर्क बेमानी-मतलब के हैं. आखिर, यात्रा अपनी अपने मंजिल पर तो पहुंची नहीं है. दरअसल तो यात्रा को श्रीनगर की अपनी मंजिल से भी मीलों आगे जाना है — उसे हर हिन्दुस्तानी के दिल और दिमाग तक पहुंचना है. तो, अभी जो यात्रा का मूल्यांकन किया जा रहा है उसे मध्यावधि का आकलन माना जाये, यह सोचा जाये कि आगे की यात्रा के लिए दिशा-निर्देश मिला है, जैसा कि कोई प्रकाश-स्तंभ करता है.

प्रोफेसर पळशीकर का कहना है कि यात्रा का 'भौगोलिक, राजनीतिक और बौद्धिक दायरा' बढ़ना चाहिए और भारत जोड़ो यात्रा के साथी उनकी इस सलाह पर अमल करें तो वह अच्छा ही होगा. इसी तरह प्रतापभानु मेहता ने भारत जोड़ो यात्रा की कामयाबी को आंकने की तीन कसौटियां बतायी हैं कि यात्रा से एक नया विचारधाराई स्वप्न निकलकर आना जाना चाहिए, सियासी तौर पर तेजरफ्तारी आनी चाहिए और विपक्षी पार्टियों की एकता की धुरी बननी चाहिए. यात्रा के साथी इस सलाह पर भी अमल करें तो आगे फायदा ही होना है.

इस आलोचनात्मक मूल्यांकन से हमें ये जानने में मदद मिली है कि भारत जोड़ो यात्रा ने विचारधाराई और सियासी लड़ाई के दो अहम मोर्चों पर अभी तक क्या कुछ हासिल किया है और यात्रा जब नये साल में फिर से आगे बढ़ेगी तो क्या कुछ करने की जरूरत पड़ेगी.

संदेश वेधक और पहुंच ज्यादा हो

भारत जोड़ो यात्रा जिस विचारधाराई चुनौती से मुकाबिल है, वही इसकी सबसे कठिन परीक्षा भी है. यही मुख्य वजह है जो अनेक जन-आंदोलन और हमारी तरह के संगठन इस यात्रा के साथ लग गये हैं. इस मोर्चे पर मिलने वाली किसी भी कामयाबी से सिर्फ कांग्रेस को नहीं बल्कि समूचे विपक्ष को फायदा होगा. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ- भारतीय जनता पार्टी की जोड़ी ने जो विचारधाराई प्रभुसत्ता बनायी है, उसे यात्रा ने सीधी टक्कर दी है. यह यात्रा की मुख्य उपलब्धि है. विचारधाराई परिवेश ऐसा बन चला है कि बीजेपी के विरोधी भी उसके हिन्दुत्व की नकल कर रहे हैं लेकिन ऐसे परिवेश के बीच भारत जोड़ो यात्रा ने सांवैधानिक मूल्यों की याद दिलायी और सेक्युलरिज्म के पक्ष में डटकर खड़े रहने का संकल्प दिखाया है.

बड़े लंबे अरसे के बाद देखने को मिला है कि राजनेता किसी सार्वजनिक मंच पर खड़े होकर धन्ना सेठों और राजनीति की सांठगांठ से चलने वाले क्रोनी कैपिटलिज्म के खिलाफ खुलकर बोल रहे हैं. यात्रा का संदेश सिर्फ यहीं तक सीमित नहीं कि मंच से क्या बोला जा रहा है और प्रेस-सम्मेलन में क्या कहा जा रहा है. यात्रा अनबोले भी संवाद कर रही है. इस यात्रा का स्वभाव वैसा ही है जैसा कि किसी तीर्थयात्रा का होता है. तपस्या का आह्वान करती और दिलों को आपस में जोड़ती यह यात्रा बीजेपी के विचारधाराई वर्चस्व में सेंध लगाने में कामयाब रही है. यात्रा ने प्रेम और एकता जैसे शब्दों में नई ताकत भरी है, किसानों, कारीगरों तथा गरीबों के देश भारत की छवि को उभारते हुए यात्रा आगे बढ़ी है. भारत जोड़ो यात्रा के कारण नफरत की राजनीति के खिलाफ बोलना मुमकिन हो चला है— यह कोई छोटी-मोटी उपलब्धि नहीं है.

राष्ट्रीय स्तर पर कथानक बदल जाये, इसके लिए अभी बहुत कुछ करने की जरूरत है. बहुधा ऐसा भी हुआ है कि संदेश सुनाने वाला ज्यादा दिखा है और इस दिखने में स्वयं संदेश उतना मुखर नहीं हो सका है जितना कि उसे होना था. एक अर्थ में देखें तो यह जरूरी भी था क्योंकि बीजेपी की रणनीति रही है कि संदेश को भटकाना है तो निशाना संदेशवाहक पर लगाओ. लेकिन, अब भारत जोड़ो यात्रा के लिए जरूरी है कि वह अपने संदेश को ज्यादा तेज़ बनाये और संदेश की पहुंच और अधिक व्यापक करे.

समस्या यह नहीं कि भारत जोड़ो यात्रा का अर्थ अपने आप में गोल-मोल है, बहुत प्रकट नहीं है (जैसा कि प्रतापभानु मेहता को लगता है) बल्कि मुश्किल ये है कि यात्रा के साथ कई संदेश नत्थी हैं और इस वजह से यात्रा के अर्थ अपनी धुरी से थोड़े छिटके-बिखरे नजर आते हैं. मीडिया ने इस यात्रा से पूरी तरह से कन्नी काट रखी है तो भी ऐसी कोशिश की जा सकती है कि यात्रा के मायने-मकसद देश के ज्यादातर हिस्सों में फैलें.

दूसरी तरफ, जरा राजनीतिक मोर्चे पर गौर करें जहां लड़ाई आमने-सामने की है, तो नजर आएगा कि इस मोर्चे पर भी यात्रा ने एक दुर्लभ उपलब्धि हासिल की है. यात्रा ने इस देश के मुहाफिजों के पैर जमीन पर जमा दिये हैं. असल बात तो यही है कि कोई गणतंत्र उसी हद तक जीवित रहता है जिस हद तक उस देश का जन-गण गणतंत्र की हिफाजत के लिए सड़कों और गलियों में उतरता है. भारत जोड़ो यात्रा से इसकी एक झलक मिली है.

कुंद पड़ा मोदी का सबसे बड़ा हथियार

लेकिन चुनाव के एतबार से और कांग्रेस पार्टी के भविष्य के लिहाज से यात्रा के क्या फलितार्थ होने हैं? यात्रा के जो सह-यात्री 'नागरिक संगठनों' के हैं, उनके लिए यह कोई बड़ा सवाल नहीं है. लेकिन, भारत का कोई भी आम नागरिक कांग्रेस के भविष्य को लेकर तटस्थ नहीं रह सकता. इतिहास के इस मुकाम पर देश का भाग्य दरअसल कांग्रेस के भाग्य से बंधा है. इस लिहाज से देखें तो भारत जोड़ो यात्रा ने अभी तक के अपने सफर में बहुत कुछ उल्लेखनीय कर दिखाया है.

कांग्रेस के हमदर्द और उसके निष्ठावान मतदाताओं को पार्टी के प्रति अपने विश्वास को अखंड बनाये रखने की एक बड़ी वजह मिल गई है. पार्टी के कार्यकर्ताओं तथा कुछ वक्त तक किसी ना किसी पद को संभाल चुके नेताओं के पास अब कुछ सकारात्मक कर दिखाने और भविष्य के सपने संजोने का अवसर है. पार्टी का अपने नेता के प्रति विश्वास जागा है, राहुल गांधी आत्म-विश्वास से पूरमपूर नजर आते हैं. लेकिन ये सारी बातें कांग्रेस परिवार की अंदरूनी बातें हैं और इन बातों को कांग्रेस पार्टी के चुनावी संभावनाओं को बदलने के लिहाज से पर्याप्त नहीं कहा जा सकता. फिर भी, यह एक बहु-प्रतीक्षित और जरूरी कदम है.

अगर कांग्रेसी दायरे से बाहर देखें तो भी नजर आयेगा कि यात्रा का असर हुआ है. बीजेपी-विरोधी गैर-कांग्रेसी खेमे में यात्रा ने अपने लिए नये दोस्त बनाये हैं. सैकड़ो जन-आंदोलन तथा संगठन यात्रा के साथ जुड़े हैं और कांग्रेस के इर्द-गिर्द एकजुट हो रहे हैं. राहुल गांधी इन जन-आंदोलनों और संगठनों को अपनी तरफ खींचने में कामयाब हुए हैं. जहां तक आम जन का सवाल है, उनके बीच यात्रा के कारण राहुल गांधी की निजी छवि निखरी है. उसमें एक बड़ा अन्तर आया है. अब आप राहुल गांधी पर पप्पू का लकब नहीं टांक सकते. मोदी का सबसे बड़ा हथियार कुंद पड़ गया है. इससे सिर्फ कांग्रेस को ही नहीं बल्कि समूचे विपक्ष को फायदा होना है.

बेशक, यह सब अभी शुरूआत है. यात्रा की सफलता चुनावी सफलता की गारंटी नहीं. इस दिशा में पहला पड़ाव गैर-एनडीए पार्टियां हैं. यों हमारे लिए यह कत्तई जरूरी नहीं कि समूचा विपक्ष चुनावी महागठबंधन के रूप में खड़ा हो जाये लेकिन मकसद की एकता का होना बहुत जरूरी है. कुछ स्विंग वोटर होते हैं यानी हार-जीत की संभावना देखकर आखिरी वक्त में अपना मन बनाने वाले मतदाता. ऐसे मतदाताओं को आश्वस्त करने और उन्हें अपने पक्ष में लाने की चुनौती तो खैर अभी बहुत आगे की बात है.

हमारे गणतंत्र के आगे झूठ और नफरत की जो दीवार खड़ी कर दी गई है, भारत जोड़ो यात्रा उसमें सूराख करने में कामयाब हुई है. इससे आशा की किरणें और ताजी हवा अन्दर आयी है. लेकिन असल काम यात्रा के बाद शुरू होगा. जैसा कि सुहास पळशीकर ने याद दिलाया है, यात्रा सिर्फ एक आयोजन बनकर नहीं रह जानी चाहिए. यात्रा को एक आंदोलन में तब्दील करना होगा.